विपश्यना

साधकों का
मासिक प्रेरणा पत्र

वार्षिक शुल्क रु. 30/-
आजीवन शुल्क रु. 500/-

बुद्धवर्ष 2558, आषाढ़ पूर्णिमा, 12 जुलाई, 2014 वर्ष 44 अंक 1

For Patrika in various languages, visit: http://www.vridhamma.org/Newsletter_Home.aspx

धम्मवाणी

को नु हासो किमानन्दो, निच्चं पज्जलिते सति।
अन्धकारेन ओनद्धा, पदीपं न गवेसथ॥
धम्मपद- १४६, जरावग्गो.

जहां प्रतिक्षण (सब कुछ) जल ही रहा हो, वहां कैसी हँसी? कैसा आनंद? (कैसा आमोद? कैसा प्रमोद?) ऐ (अविद्यारूपी) अंधकार से घिरे हुए (भोले लोगो!) तुम (ज्ञानरूपी) प्रकाश-प्रदीप की खोज क्यों नहीं करते?

धर्मचक्र प्रवर्त्तन

(पूज्य गुरुदेव द्वारा लिखवा गया एक धर्म-पत्र)

रंगून, दि. १५-७-१९६८

प्रिय शंकर! सीता! राधे! विमला!

धर्म का तत्त्व समझने वाले बनो!

आज आषाढ़ पूर्णिमा का पावन पर्व है। वैशाख पूर्णिमा के समान ही हमारे लिए यह भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण दिवस है और उसी की भांति त्रिधा पवित्र भी। जिस प्रकार वैशाख पूर्णिमा के दिन बोधिसत्त्व ने जन्म लिया, इसी दिन उन्हें सम्यक संबोधि प्राप्त हुई और इसी दिन सम्यक संबुद्ध ने महापरिनिर्वाण प्राप्त किया; उसी प्रकार आज के दिन ही बोधिसत्त्व तुषित देवलोक से च्युत होकर महामाया के गर्भ में स्थित हुए (जन्म के दस माह पूर्व) और आज ही के दिन उन्होंने घर से बे-घर हो, महाभिनिष्क्रमण किया, और आज ही के दिन सम्यक संबोधि प्राप्त करने के पश्चात पहला धर्मोपदेश देकर अनुत्तर धर्मचक्र-प्रवर्तन किया। तीनों ही बातें निम्न प्रकार से अत्यंत महत्त्वपूर्ण हुईं।

१- नये जीवन का प्रतिसंधि दिवस

जन्म ग्रहण करने के समान ही प्रतिसंधि ग्रहण करना यानी गर्भ में स्थित होना अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। नाम और रूप, यानी, शरीर एवं चित्त के पारस्परिक संयोग द्वारा जो जीवन प्रवाहित होता है वह इन दोनों के उच्छेदन द्वारा समाप्त हो जाता है। इसी को च्युति कहते हैं, मृत्यु कहते हैं। चित्त-संतति काया-संतति से विच्छिन्न होकर च्युत हो जाती है, अलग हो जाती है। इसके बाद निष्प्राण शरीर विघटित हो कर चार महाभूतों में विलीन हो जाता है, परंतु चित्त-संतति विघटित नहीं होती। वह तुरंत किसी अन्य 'रूप' यानी ''कायस्कन्ध'' से जा जुड़ती है। इसी को प्रतिसंधि कहते हैं, गर्भाधान कहते हैं। पुरुष और स्त्री के वीर्य और रज के सम्मिश्रण से तत्क्षण जो कलल (भ्रूण का प्रारंभिक गोला) तैयार होता है, चित्त संतति उसी रूप-बिंदु से जा जुड़ती है और यही नये जीवन की प्रतिसंधि है। इसका अर्थ होता है कि नया जीवन गर्भ के रूप में संयुक्त होते ही आरंभ हो जाता है, जन्म भले कुछ महीनों बाद हो। विनय पिटक (भिक्षुओं के नियम) के अनुसार कोई व्यक्ति २० वर्ष के पूर्व भिक्षु नहीं बन सकता। इसके पहले वह चीवर धारण करता है तो श्रामणेर कहलाता है। बीस वर्ष की उम्र पूरी होने पर ही कोई उपसंपदा लेकर भिक्षु जीवन में प्रवेश पा सकता है। ये २० वर्ष जन्म के दिन से नहीं गिने जाते, बल्कि जन्म-दिवस के १० महीने पूर्व से गिने जाते हैं, यानी, गर्भाधान के समय से गिने जाते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि जन्म की तुलना में गर्भाधान के समय का अधिक महत्त्व है।

चित्त-संतति प्रतिक्षण नष्ट होती है और पुनः प्रतिक्षण उदय होती है। उसके जन्म-मरण का चक्कर तो प्रतिक्षण चलते ही रहता है। यह चित्त-संतति अत्यंत शुद्ध अवस्था में (ध्यानों के बल पर) यदि अरूप ब्रह्मलोक में उत्पन्न हो जाय तो उसे किसी रूप-खंड अथवा शरीर के आधार की आवश्यकता नहीं रहती, क्योंकि वहां केवल चित्त ही चित्त है; रूप है ही नहीं। परंतु बाकी जितनी भी स्थितियां हैं-- रूप ब्रह्म की, देवों की, मनुष्यों की, पशु-पक्षियों की, सरीसृपों की, प्रेत-असुर अथवा नरक योनियों की, उन सब में इस चित्त-संतति के लिए रूप का आधार होना नितांत अनिवार्य है। चित्त-संतति बिना आधार के भटकती नहीं फिर सकती। यदि वह प्रेत बन कर घूमती है तो भी उसे तत्क्षण किसी प्रेत योनि के सूक्ष्म शरीर से प्रतिसंधित हो जाना पड़ता है यानी जुड़ जाना पड़ता है। जो योनिज प्राणी हैं, उनकी गर्भ में प्रतिसंधि होती है। जो अयोनिज प्राणी हैं, उनके शरीर के प्रकट होते ही चित्त-संतति साथ जुड़ी होती है क्योंकि चित्त-संतति को रूप का आधार तुरंत ग्रहण करना होता है। हां, यह रूप, यानी, शरीर-- मनुष्य, पशु-पक्षी, सरीसृप आदि के प्रकार का स्थूल, यानी, ठोस हो; अथवा असुर, प्रेत, देव, ब्रह्माओं के प्रकार का सूक्ष्म वायव्य हो; परंतु शरीर का होना आवश्यक है ही। चित्त-संतति उन रूपावचर लोकों में भटकती नहीं फिर सकती। च्युति होते ही प्रतिसंधि होगी ही; और इस प्रतिसंधि का नाम ही नया जीवन है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारी मान्यता में एक प्रकार से तीन बार जन्म होता है। एक जब गर्भ-स्थिति द्वारा प्रतिसंधि हो, दूसरा जब योनिज जन्म हो, और तीसरा जब मोह के आवरण को ज्ञान के द्वारा छिन्न करके व्यक्ति नया जीवन धारण करे। इसलिए बोधिसत्त्व सिद्धार्थ का जन्म और उसकी बुद्धत्व प्राप्ति के ही समान उसका यह गर्भ स्थित प्रतिसंधि-दिवस भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है।

२- महाभिनिष्क्रमण दिवस

इसी दिन जो महाभिनिष्क्रमण हुआ, वह भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं। इसी गृहत्याग में बोधि-प्राप्ति का कारण बीज रूप से समाया हुआ था। कोई सत्त्व घर में रह कर साधारण ज्ञान भले प्राप्त कर ले, परंतु सम्यक संबोधि नहीं ही प्राप्त कर सकता। और भगवान द्वारा सम्यक संबोधि प्राप्त करना अथवा इसके निमित्त घर छोड़ कर वनवासी होना, केवल अपनी मुक्ति और अपनी ही स्वार्थ-सिद्धि के लिए नहीं होता। यदि उन्हें केवल अपनी ही मुक्ति अभीष्ट होती तो चार असंख्येय और एक लाख कल्प पूर्व तापस सुमेध के रूप में जब भगवान दीपंकर बुद्ध से साक्षात्कार हुआ था, तभी उनसे विपश्यना

भावना सीख कर अरहंत पद प्राप्त कर मुक्त हो चुके होते। परंतु उस समय उनके मन में धर्मसंवेग उठा कि वे असंख्य जन्मों तक अनंत कष्ट-यातनाओं को सहते हुए क्रमशः दसों पारमिताओं को परिपूर्ण करके स्वयं सम्यक संबोधि प्राप्त करेंगे। इस प्रकार न केवल अपना बल्कि अनेकानेक प्राणियों का दुःख दूर करते हुए उन्हें मुक्ति-लाभ करायेंगे। और अब बोधिसत्त्व के इस अंतिम जीवन में सभी पारमिताओं के परिपूर्ण हो जाने पर, वह समय आ गया जबकि उन्हें सम्यक संबोधि उपलब्ध करनी थी। और इसी हेतु केवल अपने ही नहीं बल्कि अनेक प्राणियों के मोक्ष हेतु बोधिसत्त्व ने गृहत्याग किया। इसीलिए यह महाभिनिष्क्रमण का दिवस अत्यंत पावन है, कल्याणप्रद है।

३- बुद्ध का प्रथम धर्मोपदेश (धर्मचक्र प्रवर्त्तन)

आज ही के दिन भगवान ने धर्मचक्र प्रवर्त्तन किया। पंचवर्गीय भिक्षुओं को अपना पहला धर्मोपदेश दिया। वैसे बुद्धत्त्व प्राप्ति के बाद उन्होंने उदान के रूप में जो पहला आंतरिक उद्‌गार प्रकट किया वह निम्न प्रकार था :--

अनेकजाति संसारं, सन्धाविस्सं अनिब्बिसं।
गहकारकं गवेसन्तो, दुक्खा जाति पुनप्पुनं।।
गहकारक दिट्‌ठोसि, पुन गेहं न काहसि।
सब्बा ते फासुका भग्गा, गहकूटं विसङ्‌खतं।
विसङ्‌खारगतं चित्तं, तण्हानं खयमज्झगा।।

-- (धम्मपद १५३-१५४, जरावग्गो)

-- यानी (इस काया-रूपी) घर बनाने वाले की खोज में (मैं) जन्म-जन्मांतरों तक (भव-)संसरण करता रहा, किंतु बार-बार दुःखमय जन्म ही हाथ लगे। ऐ घर बनाने वाले! (अब) तू देख लिया गया है। अब फिर (तू, नया) घर नहीं बना सकता। तेरी सारी कड़ियां टूट गयी हैं और घर का शिखर भी विशृंखलित हो गया है। चित्त पूरी तरह संस्कार-रहित हो गया है, और तृष्णाओं का क्षय (निर्वाण) प्राप्त हो गया है।

स्पष्ट है कि उन्होंने घर बनाने वाले के रूप में किसी देव, ब्रह्म या ईश्वर को नहीं देखा, बल्कि स्वयं अपने चित्त को देखा, जो कि संस्कारों के कारण नये-नये रूप धारण करता है, नये-नये घर बनाता है, बार-बार जन्म लेता है। हां, ये बोल उदान मात्र थे। भगवान के उपदेश नहीं थे। ये वचन किसी को सम्बोधन करके नहीं कहे गये, अकेले में अपने आप हर्षोल्लास से उद्वेलित होकर कहे गये थे।

इसी प्रकार जो दूसरा आंतरिक उद्‌गार प्रकट किया, वे निम्न प्रकार थे :--

यदा हवे पातुभवन्ति धम्मा, आतापिनो झायतो ब्राह्मणस्स।
अथस्स कङ्‌खा वपयन्ति सब्बा, यतो पजानाति सहेतुधम्मं।।
यदा हवे पातुभवन्ति धम्मा, आतापिनो झायतो ब्राह्मणस्स।
अथस्स कङ्‌खा वपयन्ति सब्बा, यतो खयं पच्चयानं अवेदी।।
यदा हवे पातुभवन्ति धम्मा, आतापिनो झायतो ब्राह्मणस्स।
विधूपयं तिट्‌ठति मारसेनं, सूरियोव ओभासयमन्तलिक्खं।।

--(कथावत्थुपाळि २.३२१, कङ्‌खाकथा)

-- यानी जब कोई तपस्वी ब्राह्मण तप साधना करके धर्म का साक्षात्कार कर लेता है तब उसके सारे संशय दूर हो जाते हैं और वह धर्मों के प्रत्यय को जान लेता है, उत्पत्ति का कारण जान लेता है, उन कारणों का निरोध जान लेता है और उनका उन्मूलन जान लेता है। इस प्रकार कारणों को जान कर और जाने हुए कारणों का निरोध कर, वह तपस्वी ब्राह्मण दुष्ट मार को जीत कर ऐसे ही प्रभावान होकर स्थित होता है, जैसे कि बादलों को छिन्न-भिन्न करके खुले आसमान में चमकता हुआ सूर्य। ये भी केवल उदान वचन थे, भगवान के उपदेश नहीं।

मुक्तिसुख-भोग के सात सप्ताह पूरे होने पर भगवान के मन में ऐसे भाव उठे-- ''मैंने जिस अनुत्तर धर्म को प्राप्त किया है, वह बहुत गंभीर है, दुर्दर्शनीय है, दुर्ज्ञेय है, तर्क से अप्राप्य है। इस धर्म को यह काम-भोग में रत, और मूढ़ता में रत जनता भला कैसे समझ पायेगी। समझाने का प्रयत्न निरर्थक होगा, कष्टप्रद होगा।'' विचित्र स्थिति उत्पन्न हुई। प्राणी मात्र को सत्य धर्म का दर्शन करा कर निर्वाण की ओर ले जाने की दुर्दमनीय कामना रखने वाले बोधिसत्त्व जब स्वयं सम्यक सम्बुद्ध हुए तब सोचने लगे - ''इस गंभीर धर्म को अपने तक ही सीमित रखें।''

तब ब्रह्मलोक के सहम्पति ब्रह्मा ने भगवान के मन की यह बात जानी और वह चिंतित हुआ। भगवान के सम्मुख प्रकट हो, उनके चरणों में नमस्कार करता हुआ, वह भगवान से प्रार्थना करने लगा-- ''भन्ते भगवान! धर्मोपदेश करें। सुगत! धर्मोपदेश करें। यह सच है कि जगत में मिथ्यादृष्टियों में उलझे मोहावच्छन्न व्यक्तियों की संख्या ही अधिक है। लेकिन तब भी थोड़े से लोग तो ऐसे अवश्य हैं, जिनकी दृष्टि पर मिथ्यावाद और मूढ़ता का बहुत झीना-सा पर्दा ही पड़ा हुआ है। यह पर्दा शीघ्र ही दूर किया जा सकता है। आपका यह विरज विमल धर्म शीघ्र ही उनकी समझ में आ सकता है।''

ब्रह्मा द्वारा इस प्रकार अनुरोध किये जाने पर भगवान ने निर्णय किया कि वे लोक में धर्मचक्र का प्रवर्त्तन करेंगे। ऐसा निश्चय कर उन्होंने सहम्पति ब्रह्मा को गाथा द्वारा कहा -- ''हे ब्रह्मा! उन लोगों के लिए अमृत का द्वार बंद हो गया है जो कान वाले होने पर भी श्रद्धा को छोड़ चुके हैं। हे ब्रह्मा! निरर्थक पीड़ा का ख्याल करके ही मैं मनुष्यों को यह उत्तम श्रेष्ठ धर्म नहीं समझाना चाहता था।''

सहम्पति ब्रह्मा के प्रति भगवान के ये वचन भी उपदेशात्मक नहीं कहे जा सकते। यद्यपि बुद्ध वचन तो थे ही।

इसके बाद भगवान ने ध्यान करके देखा कि किसको सबसे पहले वे अपने इस अमृत धर्म से लाभान्वित करें। तब उन्हें अपना पूर्व गुरु आलारकालाम याद आया। लेकिन जब बोधिनेत्रों से देखा तो पाया कि वह एक सप्ताह पहले मर चुका है। उसके बाद उन्हें उद्दक रामपुत्त का ध्यान आया। परंतु देखा कि वह भी एक दिन पूर्व ही मर चुका है। इन दोनों व्यक्तियों से भगवान ने क्रमशः सातवीं और आठवीं ध्यान समापत्ति सीखी थी। ये दोनों ध्यान मार्ग में उन्नत होते हुए भी निर्वाण-मार्ग से दूर थे। भगवान ने मोह-मूढ़ता को दूर करने वाला जो विरज विमल मुक्तिदायक धर्म स्वयं ढूंढ निकाला, उसे वे इन दोनों व्यक्तियों को सिखाना चाहते थे। परंतु जब देखा कि वे दोनों ही नहीं रहे तब उन्हें कपिलवस्तु के पांचों ब्राह्मण स्मरण हो आये, जिन्होंने छः वर्ष की कठोर तपश्चर्या में उनका साथ दिया था और उनकी अनथक अमूल्य सेवाएं की थीं, इसी आशा पर कि यह व्यक्ति एक दिन सम्यक सम्बुद्ध बनेगा और हमें भी ज्ञान देकर हमारा उद्धार करेगा। लेकिन अंतिम दिनों में वे बोधिसत्व को छोड़ कर अन्यत्र चल दिये थे। क्योंकि भयावह काया-कष्ट को ही उन दिनों साधना का मापदंड माना जाता था अतः उन पांच ब्राह्मण तापस साथियों ने जब देखा कि राजकुमार सिद्धार्थ अपने कठिन व्रत-उपवासों को छोड़ कर पुनः भोजन करने पर उतारू हो गया है, तब वे अत्यंत खिन्न और निराश होकर उसका साथ छोड़ कर चले गये थे। भगवान ने देखा कि ये पांचों ब्राह्मण संन्यासी इस समय काशी प्रदेश में वाराणसी नगर के समीप ऋषिपत्तन मृगदाय वन में निवास कर रहे हैं। अतः उनको अपना धर्म समझाने के लिए वे काशी राज्य की ओर चल पड़े।

जब भगवान बोधगया से गया की ओर जा रहे थे, तब रास्ते में उन्हें उपक नामक एक आजीवक मिला, जो उन दिनों के नग्न-साधु संप्रदाय का संन्यासी था। उसने देखा -- 'भगवान का शरीर अत्यंत प्रभावान है, उनकी इंद्रियां अत्यंत प्रसन्न और शांत हैं। उनकी

छवि-कांति अत्यंत परिशुद्ध और उज्ज्वल है।' उसको लगा कि इस व्यक्ति ने अवश्य अमृतपान कर लिया है। परंतु वह संन्यासी संप्रदायवादी था, हर बात को सांप्रदायिक दृष्टिकोण से ही देखता था। यह जान कर भी कि इस व्यक्ति ने महत्त्वपूर्ण सिद्धि उपलब्ध कर ली है, तब भी बजाय इसके कि उनकी शरण जा कर उनसे धर्म सीखता, उसके मन में यही बात उठी कि इस व्यक्ति का गुरु कौन है? यह किसका धर्म मानता है? और उसने यही बात भगवान से पूछी। भगवान ने बताया -- 'मेरा कोई आचार्य नहीं है, मैं अद्वितीय हूं। देवताओं सहित सारे लोकों में मेरे सदृश कोई नहीं है। मैं स्वयं अरहंत सम्यक सम्बुद्ध हो गया हूं और काशी राज्य में धर्मचक्र-प्रवर्त्तन करने जा रहा हूं।'

आजीवक उपक को विश्वास नहीं हुआ और वह अपने रास्ते आगे बढ़ गया। उसके साथ भगवान का वार्तालाप भी धर्म उपदेश नहीं था। यह भी एक प्रश्नोत्तर मात्र था।

ऋषिपत्तन में भगवान को दूर से आते हुए देख कर उन पांच तपस्वियों ने परस्पर वार्तालाप किया और निश्चय किया कि यह योगभ्रष्ट श्रमण गौतम आ रहा है। ऐसे मार्ग-च्युत व्यक्ति को अब हमें न नमस्कार करना चाहिए और न ही इसके सम्मान में खड़ा होना चाहिए, न इसका पात्र-चीवर संभालना चाहिए, न ही अन्य किसी प्रकार से इसके प्रति सत्कार-सम्मान प्रदर्शित करना चाहिए। हां, समीप ही यह आसन पड़ा है, चाहे तो भले आकर इस पर बैठ जाय। परंतु जैसे-जैसे दसबलधारी भगवान बुद्ध उनके समीप आते गये, वैसे-वैसे उनके मुखमंडल के अपूर्व तेज को देख कर, बुद्ध-रश्मियों से प्रभावित होकर, वे पांचों तपस्वी अपने निर्णय पर कायम न रह सके। वे स्वयं भगवान के पास गये। एक ने भगवान का पात्र-चीवर लिया। एक ने आसन बिछाया। एक ने पांव धोने का जल रखा। एक ने पांव रखने का पीढ़ा आगे रखा और एक ने पांव रगड़ने की लकड़ी पकड़ायी। इस प्रकार पांचों भगवान की सेवा में सन्नद्ध हो गये।

लगता है लंबे समय तक उन तपस्वियों से भगवान को वाद-विवाद करना पड़ा, तब कहीं उनके मन में यह बात आयी कि सचमुच इस व्यक्ति ने सम्यक संबोधि प्राप्त कर ली है। होता यह है कि अक्सर हम अपनी दृष्टियों से इस प्रकार चिपके रहते हैं कि हर बात को अपने ही दृष्टिकोण में देखते हैं। जिस बात की परंपरा बन गयी हो, उसकी सच्चाई पर हम इतने अंध-विमोहित हो जाते हैं कि उस दायरे से बाहर निकल कर न देख-सुन सकते हैं, न सोच-समझ सकते हैं। इन पंचवर्गीय भिक्षुओं के मन में यह रूढ़िगत भावना जमी हुई थी कि परम ज्ञान तो उसे ही प्राप्त होता है, जो कठोर से कठोर कष्टमयी साधना का मार्ग ग्रहण करे। जिसने भी इस कष्ट-साधना में ढिलाई कर दी, वह तो पथ-भ्रष्ट हो गया, फिर सिद्धि कैसे प्राप्त कर सकता है? पंचवर्गीय संन्यासी इसी मिथ्या मान्यता में उलझे हुए थे। भगवान ने उन्हें किसी प्रकार आश्वस्त किया। तब कहीं भगवान का प्रथम उपदेश सुनने के लिए वे तैयार हुए और तब आज ही के दिन भगवान ने धर्मचक्र का प्रवर्त्तन किया।

क्या है यह धर्मचक्र-प्रवर्त्तन? लोकचक्र से क्या भिन्नता है इसमें? भगवान ने ऐसी कौन-सी नयी बात बतायी? कौन-से नये तथ्यों का उद्घाटन हुआ जो पहले अश्रुत थे? यह तो सचमुच नितांत क्रांतिकारी धर्म-दर्शन था। लोकचक्र के एकदम विपरीत, एकदम विमुख और इसलिए इसका प्रवर्त्तन बहुत कठिन था। जिस धारा में दुनिया बह रही है, उस धारा के अनुकूल अपने विचारों को प्रवाहित करना बड़ा सरल है। परंतु उत्तर से दक्षिण की ओर बहती हुई भागीरथी को कोई हथेलियों पर थाम कर दक्षिण से उत्तर की ओर बहाने का प्रयत्न करे तो वह कार्य सचमुच बड़ा कठिन होगा। और उससे भी कठिन कार्य था - धर्मचक्र-प्रवर्त्तन करना, जिसकी कि गति लोकचक्र से बिल्कुल विपरीत दिशा में थी। किसी एक पात्र में जल भर कर हम उसे अपने हाथों के जोर से बायें से दाहिनी ओर घुमायें और जब वह बहुत तेज घूमने लगे तब अचानक हाथ बदल कर उसे दाहिने से बायीं ओर घुमाना चाहें, तो देखेंगे कि कितनी हलचल होती है, कितना उपद्रव होता है। यह तो छोटी-सी बात हुई, परंतु वह बहुत बड़ा काम था। मानो कोई पूरब से पश्चिम की ओर घूमने वाली धरती को यकायक रोक कर, पश्चिम से पूरब की ओर घूमने वाली बना दे। उस झटके में कितनी लकीरें टूटेंगी, कितने पर्वत, नदी-नाले उलट पड़ेंगे, कितना विस्फोट होगा, कितना प्रचंड भूकंप होगा! ऐसे ही तीव्रगति के साथ घूमने वाले लोकचक्र को दसबलधारी तथागत ने अपने असीम बुद्ध-बल से रोक कर विपरीत गति में उसका संचालन किया, प्रवर्त्तन किया। यही धर्मचक्र-प्रवर्त्तन हुआ। इसीलिए आज के इस क्रांतिकारी दिवस का इतना बड़ा महत्त्व है।

भगवान ने जिस सत्य का उद्घाटन किया वह यह कि ये समस्त पीड़ाएं, जन्म-मरण का चक्कर किसी अन्य के कारण नहीं हैं बल्कि हमारे अपने चित्त-धर्मों के कारण हैं। हम आज जो कुछ हैं, वह किसी की कृपा अथवा आक्रोश के कारण नहीं, बल्कि अपने ही अनंत पूर्व जन्मों में किये गये असंख्य अच्छे-बुरे कर्म-संस्कारों के प्रतिफल स्वरूप हैं। और अब हम जो कर्म कर रहे हैं, वही हमारे अगले क्षण की स्थिति का कारण बनेगा। इसलिए हमारे निर्माता हम स्वयं हैं। हमारे दुःख-सुख का कारण हम स्वयं हैं। हमारे बंधन-मुक्ति का कारण हम स्वयं हैं।

इसी प्रकार यह समझ में आ गया कि कर्म-संस्कारों का प्रतिफल एक जन्म में हो नहीं सकता बल्कि जन्म-जन्मांतरों में हमारे सुख-दुःख का कारण बनता है। यह भी समझ में आ गया कि जिन संस्कारों की वजह से हमारी यह स्थिति है, वे सभी संस्कार अनित्य हैं, नाश होने वाले हैं और उन सब संस्कारों को दूर किया जा सकता है। संस्कारों को दूर कर असंस्कृत, अमर निर्वाण पद का इसी जन्म में, इसी काया-खंड में साक्षात्कार किया जा सकता है, रसास्वादन किया जा सकता है। धर्मचक्र के मूल में यही सत्य समाया हुआ है। दुःख है तो उस दुःख की उत्पत्ति का कोई कारण भी है और दुःख की उत्पत्ति का कोई कारण है तो उसका निरोध भी है। और निरोध है तो उस निरोध तक पहुँचाने का कोई मार्ग भी है। इस मार्ग पर चल कर कोई भी व्यक्ति अपने संस्कारों का उच्छेदन करते हुए स्वयं अपनी साधना द्वारा चित्त को विरज-विमल करता हुआ अमृतलाभी हो सकता है और यह बड़ा सरल है। कोई अच्छा गुरु मिले, पूर्व जन्म की पारमिताएं साथ हों, वर्तमान काल में साधक साधना करने के प्रति वीर्यवान हो, तो कोई कारण नहीं कि वह अभी, यहीं, इसी जन्म में समूल दुःख-निरोध क्यों न कर ले? शील, समाधि और प्रज्ञा का यह आष्टांगिक मार्ग केवल सार-तत्त्व को ही ग्रहण करता है, निस्सार बातों को छोड़ते चलता है। यही धर्मचक्र-प्रवर्त्तन है। यही आज के दिवस का महत्त्व है।

हम भी इस धर्मचक्र को अपने जीवन में धारण करें और सभी प्रकार के दुःखों के बाहर निकलें, इसी में हमारा मंगल समाया हुआ है।

(पुनश्चः--

... धर्म-शिक्षा के अनुमोदन का और साधुकार का अपना महत्त्व है। इसका अर्थ है कि तुम्हें धर्म प्रिय लगा और कम से कम उतनी देर तक तुम्हारी चित्त-संतति ऋजु-सरल बन कर प्रवाहित हुई। अतः धर्मानुमोदन और साधुवाद के इस प्रणीत पुण्य से वंचित नहीं रहना चाहिए।)

कल्याणमित्र,
सत्यनारायण गोयन्का

Registered No. NSK/235/2012-2014

WPP Postal License No. AR/Techno/WPP-05/2012-2014

ग्लोबल विपश्यना पगोडा, मुंबई में वर्ष २०१४ का सघन पालि पाठ्यक्रम

१०-१० से १०-१२-१४ (आवासीय ६० दिवसीय सघन पालि-अंग्रेजी पाठ्यक्रम)

आवश्यक योग्यताएं-- जिन्होंने तीन-दस-दिवसीय तथा एक सतिपट्ठान शिविर किया है, जो गत एक वर्ष से नियमित रूप से विपश्यना का अभ्यास तथा पांच शीलों का पालन कर रहे हैं – वे आवेदन कर सकते है। क्षेत्रीय आचार्य की संस्तुति आवश्यक है।

अर्हता: – आवेदक कम से कम १२ वीं कक्षा उत्तीर्ण हों। उनके लिए दीवाली की छुट्टी में एक दस-दिवसीय विपश्यना शिविर करना अनिवार्य होगा। अधिक जानकारी के लिए-- (१) विपश्यना विशोधन संस्थान:– कार्यालय– ०२२-३३७४७५६०, (२) श्रीमती बलजीत लांबा मो. ०९८३३५१८९७९, (३) आयुष्मती राजश्री मो. ०९००४६९८६४८, (४) डा. (श्रीमती) शारदा संघवी मो. ०९२२३४६२८०५.

निर्माणाधीन विपश्यना केंद्र-- धम्म सुधा

पश्चिमी उ.प्र. में स्थित मेरठ जनपद (हस्तिनापुर); आस-पास के अनेक जिलों से अच्छे महामार्ग व रेल से जुड़ा है। यहां पांच एकड़ भूमि पर 'धम्म सुधा' विपश्यना केंद्र में ५० साधकों के लिए मिनी धम्मा हॉल, ५० साधकों के लिए निवास, आचार्य निवास एवं अन्य आवश्यक भवन बनाने का कार्य आरंभ होने जा रहा है। संस्थान को ८०-जी की आयकर छूट उपलब्ध है। इस पुण्यकार्य में भागीदार होने के इच्छुक साधक/साधिकाएं अधिक जानकारी के लिए निम्न पते पर संपर्क कर सकते हैं।

पता-- **'मेरठ विपश्यना संस्थान',** ८, कमला नगर, बागपत रोड, मेरठ-२५०००२ (उ.प्र.), फोन- 2513997, 2953997, मो. 9319145240. ईमेल- vipassana.meerut@gmail.com

2014-15 में निम्न अवसरों पर पूज्य माताजी के सान्निध्य में एक दिवसीय महाशिविर

शरद पूर्णिमा एवं **पूज्य गुरुदेव की पुण्य-तिथि** के उपलक्ष्य में **रविवार, 28 सितंबर तथा गुरुदेव सयाजी ऊ बा खिन की पुण्य-तिथि** के उपलक्ष्य में **रविवार, 18 जनवरी को; समय:** प्रात: **11** बजे से अपराह्न **4** बजे तक, **'ग्लोबल विपश्यना पगोडा'** में। यहां 3 बजे दिवंगत गुरुदेव के रेकार्डेड प्रवचन में बिना साधना किये लोग भी बैठ सकते हैं। बुकिंग के लिए कृपया निम्न फोन नंबरों या ईमेल से शीघ्र संपर्क करें। कृपया बिना बुकिंग कराये न आयें और **समग्गानं तपोसुखो**- सामूहिक तप-सुख का लाभ उठाएं। **संपर्क:** 022-28451170 022-337475/01/43/44- Extn. 9, **(फोन बुकिंग :** प्रात: **11** से सायं **5** तक, प्रतिदिन) **Online Registration: www.oneday.globalpagoda.org**

नव नियुक्तियां

सहायक आचार्य

१. श्रीमती नम्रता पारिख, नाशिक
2-3. Mr. Sochet Kuoch & Mrs. Somaly Chan, Cambodia.
4. Mr. Teak Sieng, Cambodia.
5. Ms. Lyna Som, Cambodia.
6. Mr. Mark Hoefer, USA
7. Mr. David & Mrs. Renee Cerchie, USA
8. Mrs. Marta Van Patten; USA
9. Mr. Steve Parks & Mrs. Elissa Brown, USA

विश्व विपश्यना पगोडा परिसर में निवास-सुविधा

'धम्मालय' अतिथि-गृह के बन जाने से पगोडा परिसर में रहने एवं पगोडा में ध्यान करने के लिए अच्छी सुविधा हो गयी है। साधक और उनके परिवार के लोग २-३ दिन के लिए यहां आकर ध्यानादि कर सकते हैं। अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें-- श्री चैतन्य शाह, फोन- ९५९४२९२९९० तथा कार्या. ०२२-३३७४७५११. ईमेल- admin@globalpagoda.org

दोहे धर्म के

धारे तो ही धर्म है, वरना कोरी बात।
सूरज उगे प्रभात है, वरना काली रात॥

चुप चुप चुप करते रहें, गहन धर्म अभ्यास।
गहन मौन में ही मिले, परम तत्त्व अविनाश॥

प्रतिक्षण सति जाग्रत रहे, प्रतिपल संप्रज्ञान।
प्रतिपल भव के मल कटें, प्रतिपल हो कल्याण॥

मानव जीवन रतन सा, वृथा न देयँ गँवाय।
निरखत अंतर उदय-व्यय, मंगल बोध जगायँ॥

बिन औषध सेवन किये, रोग मुक्त ना होय।
बिना धर्म धारण किये, शोक मुक्त ना होय॥

केमिटो टेक्नोलॉजीज (प्रा०) लिमिटेड

८, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई- 400 018
फोन: 2493 8893, फैक्स: 2493 6166
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

सुत नारी धन चक्र मँह, बीत्या जनम अनेक।
मिल्यो धरम रो अमर फळ, जाग्यो बोध विवेक॥

लोक लोक अग्यान रो, छायो किसो प्रभाव।
जनम जनम तड़फै मगर, फिर जनमण रो चाव॥

जनम मरण स्यूं छुटण रो, किसो मचायो सोर।
काम क्रोध स्यूं छुटण पर, जरा करै ना गौर॥

जनम लियां तो आवसी, जरा म्रित्यु अर रोग।
रोतां-धोतां कद कटै, निज करमां रो भोग॥

बार बार लीन्यो जनम, पड्यो काळ रै गाल।
कितना युग यूं ही गया, अब तो होस सँभाळ॥

मोरया ट्रेडिंग कंपनी

सर्वो स्टॉकिस्ट - इंडियन ऑईल, ७४, सुरेशदादा जैन शॉपिंग कॉम्प्लेक्स, एन.एच.६, अजिंठा चौक, जलगांव - ४२५ ००३, फोन. नं. ०२५७-२२९०३७२, २२१२८७७
मोबा.०९४२३१८७३०१, Email: morolium_jal@yahoo.co.in
की मंगल कामनाओं सहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक: राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-422 403, दूरभाष : (02553) 244086, 244076.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, 69- बी रोड, सातपुर, नाशिक-422 007. **बुद्धवर्ष 2558, ज्येष्ठ पूर्णिमा, 13 जून, 2014**

वार्षिक शुल्क रु. **30/-,** US $ 10, **आजीवन शुल्क** रु. **500/-,** US $ 100. **'विपश्यना' रजि. नं. 19156/71. Registered No. NSK/235/2012-2014**

WPP Postal Licence No. AR/Techno/WPP-05/2012-2014
Posting day- **Purnima of Every Month,** Posted at **Igatpuri-422 403,** Dist. Nashik (M.S.)

If not delivered please return to:-

विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - 422 403
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
फोन : (02553) 244076, 244086, 243712,
243238. **फैक्स :** (02553) 244176
Email: info@giri.dhamma.org
Website: www.vridhamma.org